# वल्लभ सम्प्रदाय का दर्शन : सूरदास


**सारांश**

सूरदास की पुष्टिमार्गीय भक्ति ही वल्लभ सम्प्रदाय का आचरण पक्ष है। इनकी भक्ति साधना का अवलोकन करने पर ये पूर्व में भजन गायक के रूप में दिखाई देते है, परंतु वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित होने के पश्चात् उन्हें अपने स्वरूप और स्वयं से साक्षात् होने का अवसर मिला। वार्ता साहित्य में यह प्रसंग वर्णित है। कहा जाता है एक बार जब महाप्रभु वल्लभाचार्य जी मथुरा और आगरा के बीच स्थित गऊ घाट पर पधारे थे, तब सूरदास जी वही अपने साथियो के साथ रह रहे थे। जब उन्हें आचार्य श्री के वहाँ आगमन की सूचना मिली तो वे दर्शन की अभिलाषा लिए वहाँ गए जहाँ आचार्य श्री विराजमान थे। उन्होनें आचार्य श्री को प्रणाम किया तब आचार्य श्री ने उनसे कहा


**मुख्य शब्द :** पुष्टिमार्गीय, वल्लभाचार्य, भगवल्लीला

**अलका श्रीवास्तव**
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
विभाग हिन्दी
डॉ. राधा बाई नवीन कन्या महाविद्यालय
रायपुर

**श्वेता बोहरा**
शोध छात्रा,
पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय
रायपुर


**प्रस्तावना**

'' जो– सूर कछू भगवत जस वर्णन करो।''[1] तब आज्ञा पाकर सूरदास जी ने पद गाया

**'' हों हरि सब पतितन कौ नायक।**
**को करि सके बराबरि मेरी इते मानकौ लायक ।। 1।।**
**ऐसी कितिक बनाऊ प्रानपति सुमिरन है भयो आडो।**
**उनकी बेर निबेर लउ प्रभु 'सूर पतित को टँडो ।।''**[2]

फिर उन्होंने दूसरा पद भी गाया तब आचार्य श्री ने उनके पदो को सुनकर कहा कि

**'' जो–सूर है कै ऐसो घिघियात काहे को है सो तासो कछु भगवल्लीला वर्णन करि।।''**[3]

इस प्रसंग में जब आचार्यश्री ने यह आज्ञा की तब सूरदास जी ने आचार्यश्री से विनम्र निवेदन किया कि मुझे भगवल्लीला का ज्ञान नहीं, आप कृपा कीजिए तब आचार्यश्री ने उन्हें अपने शरण में लिया और वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित किया। इस प्रसंग का उल्लेख चौरासी वैष्णवन की वार्ता में किया गया है–

'' तब श्री आचार्य जी ने कृपा करि के दरसन को नाम सुनायों, ता पाछे समर्पन करवायों। पाछें आप दसम स्कंध की अनुक्रमणिका करी हती तो सूरदास को सुनाये। सो सगरी श्री सुबोधिनी को ज्ञान श्री आचार्य जी ने सूरदास के हृदय में स्थापन कियो। तब अनुक्रमणिका ते सगरी लीला हृदय में स्फुरी सो या मंगला चरण के अनुसार सूरदास ने महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी के आगे यह पद करिके गायों। सो पद–

**चकईरी चलि चरन सरोवर जहाँ नही प्रेम वियोग।**
**जहाँ भ्रमनिसा होती नहीं कबहू सो सायर सुखयोग।।''**[4]

वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित होने के बाद सूरदास की भाव साधना में वल्लभ दर्शन और आचरण पक्ष की पुष्टिभक्ति सुवासित होने लगी। वल्लभ सम्प्रदाय के दो पक्ष है– पहला पक्ष दर्शन सिद्धांत से संबंधित है, वहीं दूसरे पक्ष में वल्लभ सम्प्रदाय का आचरण पक्ष है जहां पुष्टिभक्ति का उल्लेख मिलता है। वल्लभ सम्प्रदाय का दोनो पक्ष सूरदास के भक्ति काव्य में द्रष्टव्य होता है।

वल्लभ दर्शन पक्ष में अध्ययन करें तो सर्वप्रथम यह विदित होता हैं कि महाप्रभु वल्लाभाचार्य जी का दर्शन पक्ष वल्लभ दर्शन के नाम से जाना जाता है। आचार्यश्री ने अपने मत के दर्शन की व्याख्या करते हुए श्री शंकराचार्य जी के अद्वैतवाद का खण्डन किया है। आचार्यश्री शुद्धाद्वैत सिद्धांत के प्रतिष्ठापक हैं। "आचार्यश्री के अनुसार कार्यकरण रूप जगत ब्रह्म ही है। ब्रह्म अपनी इच्छा से ही जगतरूप बना है। जगत न मायिक है और न भगवान से भिन्न यह ब्रह्म का अविकृत परिणाम है। भगवान की कृपा से ही मुक्ति प्राप्त होती है। भगवान का अनुग्रह ही पुष्टि है। इसी अनुग्रह से ही भक्ति का उदय होता है। भगवान के अनुग्रह रूप पुष्टि से प्रधान मानने के कारण से श्री वल्लाभाचार्य जी का मत 'पुष्टिमार्ग' कहा जाता है।"[5]

श्री वल्लभाचार्य जी का वल्लभ सम्प्रदाय जिसे शुद्धाद्वैतवाद के नाम से भी जाना जाता है। शुद्धाद्वैतवाद के संबंध में "शुद्धाद्वैत मार्तण्ड" कृति के लेखक श्री गिरधर जी ने लिखा है–

**" माया सम्बधंरहितं शुद्ध मित्युचते बुधैः।**
**कार्यकारणरूपं हि शुद्धब्रह्म न मायिकम्।**

सूरदास की काव्य साधना में व यहाँ "शुद्ध" का अर्थ है माया से संबंध से रहित। माया के सम्बन्ध से रहित ब्रह्म ही जगत का कारण और वही कार्य है। माया शबलित ब्रह्म कारण और कार्य नहीं है।[6]

वल्लभदर्शन के मुख्य बिंदुओ पर देखे तो इन बिंदुओ में बह्म, जीव, माया, जगत। संसार, मोक्ष सम्मिलित है इसके अतिरिक्त आविर्भाव तिरोभाव और विरूद्ध धर्माश्रयतत्व भी शामिल है। इन मुख्य बिंदुओ पर गहरी व्याख्याएं हमें मिलती है जो कि आचार्यश्री ने श्री मुख से कही है। इन्हें सरलता से समझने के लिए हमें सर्वप्रथम सूर के काव्य पर दृष्टि डालनी होगी।

वल्लभदर्शन की अमित छाप है जो सामान्य बुद्धिवाले मनुष्यों को वल्लभदर्शन समझने की राह में पाथेय का कार्य करती है। वल्लभ सम्प्रदाय के बिंदुओ को क्रमशः संक्षेप में सारगर्भित रूप से समझते है–

**ब्रह्म**– वल्लभ सम्प्रदाय में ब्रह्म का निरूपण करते हुए आचार्य श्री व्याख्या में कहते है कि ब्रह्म ही सब कुछ है और वही सत्य है सभी ब्रह्म का ही अंश है आचार्य श्री अपने ग्रंथ तत्वदीप निबंध के शास्त्रार्थ प्रकरण के अंतगर्त सर्वनिर्णय प्रकरण में कहते है कि

**" सर्व ब्रह्म इतिवादः ब्रह्मवादः तन।**
**आत्मैवः तदिदं सर्व ब्रह्मैव तदिदं तथा।।**

इसका आशय यह है कि ब्रह्म ही सबकुछ है। जीव ब्रह्म रूप है यह जगत भी ब्रह्म रूप है और इसी से ये दोनो सत्य है।[7]

यहाँ श्री कृष्ण भगवान को परब्रह्म माना जाता है। सूरदास के काव्य में भी इसी परब्रह्म पूर्ण पुरूषोत्तम का उल्लेख मिलता है कुछ इस प्रकार है–

**सोभा अमित अपार अखण्डित आप आतमराम।**
**पूरन ब्रह्म प्रकट पुरूषोत्तम सब विधि पूरनकाम।**
**आदि सनातन एक अनूपम अविगत अल्प अहार।**
**ऊँकार आदि वेद असुर हन निर्गुण सगुण अपार।[8]**

**जीव**

सूरदास ने अपनी काव्य साधना में ब्रह्म की उपासना में अनेक पदों का सृजन किया है। वल्लभ सम्प्रदाय के दर्शन पक्ष में जीव के सम्बन्ध में विस्तृत रूप से समझाया गया है। जीवों के प्रकार बताते हुए उनका वर्गीकरण भी दर्शन पक्ष में मिलता है। जीव के सम्बंध में अगर दर्शन पक्ष की बातों को सारगर्भित रूप में बताया जाए तो जीव अपने स्वरूप को भूल जाता है और पुनः भगवान के अनुग्रह से ही वो अपने स्वरूप से साक्षात्कार कर पाता है। इसी विचार व्याख्या को सूरदास जी ने अपने काव्य में वर्णित करते हुए कहते है कि–

**अपुन पौ आपुन ही मैं पायौ।**
**सब्दहि सब्द भयौ उजियारौ, सतगुरू भेद बतायौ।**
**सूरदास समुझें की यह गति, मनही मन मुसकायौ।**
**कहि न जाइ या सुख की महिमा, ज्यौ गूंगै गुर खायो।।[9]**

**जगत/संसार**

महाप्रभु वल्लाभाचार्य जी ने अपने दर्शन पक्ष में जगत और संसार को अलग–अलग बताया है। जगत सत्य है,वही संसार असत्य है। आचार्य श्री ने जगत को शाश्वत सत्य माना है क्योंकि ब्रह्म जगत का ही रूप है इसलिए यह भी सत्य है। महाप्रभु जी अपने ग्रंथ अणुभाष्य में यह कहते है कि–

**"विस्फुलिंग इवाग्नेःहि जडजीवाः विनिर्गताः"**

इसका आशय यह है कि पूर्ण पुरूषोत्तम की इच्छानुसार अग्नि की चिनगारी के समान उसके चिद् अंश से जीव और सत अंश से जड़ जगत की उत्पत्ति हुई।"[10]

वल्लभ मत के अनुसार जगत सत्य और अनश्वर हैं किंतु यह संसार नश्वर है। संसार से तात्पर्य इस जीव जगत में होने वाले व्यवहार से है। सूरदास जी सूर सागर के द्वितीय स्कंध में नारद एवं ब्रह्म सम्वाद का प्रसंग देते हूए कहते है कि–

**" जो हरि करै सो होई कर्ता नाम हरी।**
**जो दर्पण प्रतिबिम्ब त्यों सब सृष्टि करी।।[11]**

सूर ने अपने पदों में दर्शन के इस भेद को विविध रूपों में वर्णन किया है।

जैसे –

**आदि निरंजन निराकार काउ हुतो न दूसर।**
**रचो सृष्टि विस्तार भई इच्छा इस औसर।**
**XXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXX**
**तीन लोक निज देह में राखे करि विस्तार।**
**आदि पुरूष सोई भयो, जो प्रभु अगम अपार।[12]**

**माया**

महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के दर्शन सिद्धांतो में अनेक तत्वों की प्रधानता और उनकी व्याख्या है। आचार्य श्री ने माया के सम्बन्ध में कहा है कि माया पर ब्रह्म श्री हरि का अंश है तथा वह उनके अधीन है। " माया ब्रह्म की" सर्वभवन शक्ति" है। इसी शक्ति के बल पर वह सम्पूर्ण सृष्टि का सृजन पालन और संहार करती है।

**माया सर्वभवन सामर्थ्यम् शक्तिर्वा का चित, अप्रयोजिका तामपि।**
**करणत्वेनस्वीकृत्य इदं सर्वमेंव जगयुत्पाद यति पालयतिनाषयतिच।।[13]**

आचार्य श्री ने माया के दो भेद बताए है– "एक विद्या माया और दूसरी अविद्या माया। भगवान की उपर्युक्त दो रूपधारिणी माया ही इस सृष्टि (जगत) और संसार का प्रसार करती है।"[14] जीव इस माया के वशीभूत होकर कर्म करता है। सूरदास जी ने भी ईश्वर की जीव जगदादि सृष्टि का सृजन करने वाली माया का वर्णन भी अपने काव्य में किया है

**मिथ्या यह संसार और मिथ्या यह माया।**
**मिथ्या है यह देह कहो क्यों हरि बिसराया।।[15]**

वार्ता साहित्य के एक प्रसंग में जहां सूरदास की वार्ता है वहॉ उन्होनें माया के विषय में यह पद गाया है–

**अब हौ नाच्यों बहुत गोपाल**
**काम क्रोध कौ पहरि चोलना कंठ विषय की माल।।**
**कोटिक कला काछि दिखराई जल थल सुधि नाहिं काल।**
**"सूरदास" की सबै अविद्या दूरि करहु नन्दलाल।।[16**

**मोक्ष**

मोक्ष के संदर्भ में विभिन्न दर्शनों में यह मत प्रचलित है कि संसार के दुःख से छूटकर आनंद प्राप्ति की मुक्त और अंतिम अवस्था ही मोक्ष है। वल्लभ सम्प्रदाय मे भी दुःख भाव से मुक्ति और नित्यानंद की प्राप्ति मोक्ष मानी गई है। इस मोक्ष प्राप्ति के संदर्भ में भी अनेक सोपानो का वर्गीकरण वल्लभ मत में किया गया है। जिस प्रकार जीव के अंतर्गत अनेक उपभेद है उसी तरह उन विभिन्न जीवो के कर्म को प्रधानता देते हुए मोक्ष प्राप्ति के संदर्भ में अनेक सोपान है।

महाप्रभु वल्लाभाचार्य जी ने अपने ग्रंथ अणुभाष्य में कहा है कि "पुष्टिमार्गीय फल यह है कि मनुष्य स्थूल–लिंग शरीर को छोड़ कर तथा भगवल्लीलोपयोगी देह पाने के बाद ब्रह्य के साथ आनंद रस ले।"[17]

सामान्य अर्थो में मोक्ष के इस गूढ़ अर्थ को कहने का प्रयास करे तो पूर्ण पुरूषोत्तम के लोक मे पहुँच कर पूर्ण पुरूषोत्तम की आनंद लीलाओ का आनंद विग्रह से अनुभव करना ही वल्लभमत के भक्त का चरम एंव अन्तिम लक्ष्य है। परब्रह्य के अंश में विलीन होना ही मोक्ष है। सूरदास जी ने भी संसार के इस संसारिक बंधन से जीवन को मुक्त करने की अवस्था के संदर्भ में बखान करते हुए कहा है कि

**निर्गुण मुक्ति हू को नाहिं चहै, मम दर्षन ही ते सुखल हैं।**
**ऐसो भक्त सुमुक्त कहावै, सो बहुरयोचलि भवनहिं आवै।।**[18]

वल्लभ सम्प्रदाय में ब्रह्य, जीव, माया, जगत/संसार आदि के सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा मिलती है। इन मुख्य तत्वों का सूरदास के काव्य पर अनेक पदों पर दिग्दर्शन मिलता है।सूरदास जी त्यागी, विरक्त और प्रेमी भक्त थे। वे श्री वल्लभाचार्य जी के सिद्धांतो के पूर्ण ज्ञाता थे। उनकी भगवद्सेवा सिद्ध थी। वे महाभागवत थें, उन्होने पचासी वर्ष की अवस्था में गोलोक प्राप्त किया। एक दिन अंतिम समय निकट जानकर सूरदास जी श्रीनाथ जी के दर्शन करने नहीं गए और पारसोली जहाँ वे निवास करते थे वही रहे तब श्री गुंसाई जी को पूर्वाभास हो गया और उन्होने सभी वैष्णवन को एकत्र कर कहा कि–

**"पुष्टिमारग को जहाज' जात हैं सो जाको कछू लेनो होय सो लेऊ और उहां जायके सूरदास जी को देखो"**[19]

श्रीगुंसाई जी का यह कथन सूर की भक्ति साधना की श्रेष्ठता को बताता है। वल्लभ सम्प्रदाय जिसे पुष्टिमार्ग भी कहा जाता है इस सम्प्रदाय के जहाज के रूप में उनको संबोधित करना ही पुष्टि भक्ति के प्रति अनन्य सेवा का प्रतिफल है। सूर ने अपनी काव्य यात्रा में असंख्य पदो की रचना की थी परंतु उन्होने अपने आचार्य गुरूदेव महाप्रभु श्री वल्लाभचार्य जी के सम्बन्ध में एक भी पद की रचना नही की इस संदर्भ में वार्ता साहित्य में प्रसंग में दिया गया है। जहाँ चतुर्भुजदास जी ने सूरदास जी से कहा कि "अपने श्री ठाकुर जी के लक्षावदि पद किये है। परन्तु आचार्य जी को जस बरनन नाहीं कियो।" [20] यह सुनकर सूरदास जी की निष्ठा बोल पड़ी कि–

"मै तो सगरो जस श्री आचार्य जी को ही वरनन कियो है , जो मै। कछु न्यारो देखतो तो न्यारो करतो परि तैने मो सो पूछी है, सो मै तेरे पास कहत हों, सो या कीर्तन के अनुसार सगरे कीर्तन जानिया।

सो पद–

**भरोसो दृढ़ इन चरनन कैरो**
**श्री वल्लभ नंख चन्द्र छटा बिनु सब जगमाझ अंधेरो।।1।।**
**साधन और नहीं या कलि मे जासो होत निवेरो।**
**'सूर' कहा कहे द्विविध आंधरो बिना मोल के चेरो।।2।।**[21]

सूरदास जी का यह पद आश्रय के पद के रूप में विख्यात है। सूर काव्य पर अपने गुरू आचार्यश्री वल्लभ तथा उनके दर्शन के प्रभाव को भी रेखांकित करता है। सूरदास स्वयं कहते है। कि वे "द्विविध" आंधरो है अर्थात शरीर में नेत्र नही है तथा अज्ञानी भी है, किन्तु गुरूकृपा बिना सबकुछ अंधकारमय था। गुरू की कृपा ने उन्हें सक्षम एवं योग्य बनाया। सूरदास जी की काव्य साधना में वल्लभ सम्प्रदाय की अमिट छाप है जो सूरदास जी को भक्त शिरोमणि कवि की उपाधि से विभूषित करता है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**


1. हरिराय चौरासी वैष्णव की वार्ता, इन्दौरः वैष्णव मित्र मण्डल 2049 वि पृष्ठ संख्या 433
2. वही पृष्ठ संख्या "434
3. वही पृष्ठ संख्या ''434
4. वही पृष्ठ संख्य"435
5. कल्याण पत्रिका, हिन्दू संस्कृति अंक, गोरखपुरः गीताप्रेस, पृष्ठ सं. 848
6. स्नेहलता.वल्लभ वेदांत पर एक दृष्टि,नई दिल्लीः श्री गुरुमन्दिर प्रेस, पृष्ठ सं.56
7. श्री वल्लाभाचार्य जी. तत्वदीप निबंध, बम्बईः ज्ञानसागर पृष्ठ सं. 62
8. सूरदास. सूर सारावली, बम्बईः वेकटेश्वर प्रकाशन प्रेस, पृष्ठ संख्या 34
9. सूरदास. सूरसागर, काशीः नागरी प्रचारिणी सभा,
10. श्री वल्लभाचार्य जी. अणुभाष्य, बम्बईः वेकटेश्वर प्रकाशन प्रेस, सम्वत् 1964, पृ.सं
11. सूरदास. सूरसागर बम्बईः वेकटेश्वर प्रकाशन प्रेस, सम्वत् 1964, पृसं. 36
12. वही पृ.सं38
13. फौजदार, नरेन्द्र सिंह. सूर की भाव साधना, महेसाणाः गिरनार प्रकाशन वर्ष 1989, पृष्ठ सख्या. 158
14. गुप्त, दीनदयालु. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, प्रयागः हिन्दी साहित्य सम्मेलन वर्ष 1970, पृष्ठ संख्या 455
15. सूरदास. सूरसागर, बम्बईः वेकटेश्वर प्रकाशन प्रेस, सम्वत् 1964, पृष्ठ संख्या 158
16. हरिराय.चौरासी वैष्णव की वार्ता,इन्दौरः वैष्णव मित्र मण्डल,सम्वत् 2049 पृ.सं 439
17. गुप्त, दीनदयालु. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, प्रयागः हिन्दी साहित्य सम्मेलन, वर्ष 1970 पृष्ठ संख्या 466
18. सूरदास. सूरसागर, बम्बईः वेकटेश्वर प्रकाशन प्रेस, सम्वत् 1964 पृ. सं 43
19. हरिदास, चौरासी वैष्णव की वार्ता, इन्दौरः वैष्णव मित्र मण्डल, सम्वत् 2049 वि.पृ सं 468
20. वही "पृ सं 469
21. वही "पृ सं 469